आनंद

गंगा विनीता
(बि.एस.सी.मात्स, प्रधम वर्ष)

बसंत ऋतु थी, मौसम सुन्हरा और रंगीन।
होले होले हवा चली, आचल भर फूल से।
पपिहे की पीउ, कोयल की कूहू।
सूरज की किरण पहूँची धरती पर।
परंतू एक समस्या आ पडी।
मारुत के संग एक नन्ही सी पुकार मैने सुनी।
बात तो समझ गयी कि वह किसि बच्चे की थी।
न जाने क्यों और कहाँ से।
मन पर तो तिमिर छा गया।
छाती पर मूँग दल गया।
पूनः सुनी मैने आवाज़।
सोचा किसी की मदद लूँ।

पर सभी अपने अपने काम में व्यस्त रहे।
चैन न ख्रोते हुए, मैं ने टूंढ़ संकल्प किया।
आगे बढूँगी और उसे ज़रूर ढूँढ निकालूँगी।
प्रभु की कृपा से मैं जीत गयी।
देखा उसे; वह या ताल की और बहुत प्यारा सा बच्चा था।
कहने लगा रस्ता भूल गयाँ और मैं बन गयी अंधे की लकडी।
उसके आँसू पोंछ कर, मैं ले गयी उसी के घर।
उसकी माँ का भी यही हाल।
मुझे इस कर्म का बहुत शुक्रिया आदा किया।
हुआ मुझे इतना आनंद, बस कहो माँ से भी ज़्यादा, कुछ अलग तरह का।

❖

एक मीठा दर्द

अशोक मोहन राज
(हिन्दि विभाग)

कालेज के छूटते ही प्रोफेसर विनोद लाल बस अड्डे की और दौड पडे ताकि सवा चार बजे की बस से शहर जा सके। उन्हें दौडते देख छात्र हँसने लगे। तरह तरह की चुभनेवाली बातें हवा में तैरती आ नहीं थीं। पर उनकी बिल्कुल परवाह न करके आगे बढनेवाले विनोद लाल के कंधों पर तो मज़बूत हाथ पडे। उन्होंने चौक्कर देखा तो प्रोफसर शिवशंकर को पाया।

अरे कहाँ भाग रहे हो? - शिवशंकर ने हँसकर पूछा। 'एक ज़रूरी काम है, शहर जाना है' - विनोद लाल ने अनमने भाव से कहा।

'इतनी जल्दी क्या है? तुम तो यहीं के हो।'- शिवशंकर का कहना विनोद को अच्छा नहीं लगा।

'मैं भी तो शहर जा रहा हूँ। मेरी ओर से कोई मदद'- शिवशंकर की बात पूरी नहीं हुई कि विनोद बोल उठे - नहीं। इसकी कोई ज़रूरत नहीं।

फिर भी दोनों साथ साथ चलने लगे।

-'वाह। यार तुम भी कमाल के शख्स हो। कहते हैं सात कदम साथ चलनेवाले साथी बनने और बनाने के काबिल होते हैं। हम दोनों तो सात कदम नहीं बल्कि सत्तर मीटर से ज़्यादा साथ चल चुके होंगे- शिवशंकर के मूँह से निकली बातें सुनकर विनोद लाल हैरान हो गये।

प्रोफसर शिवशंकर कुछ ज़्यादा ही बोलनेवालो माने चाते हैं। उनसे दोस्ती रखनेवाले भी काफी कम है। लेकिन विद्यार्थियों के बीच उनका बडा नाम है। विनोद की हैरानी बढने लगी।

अब दोनों बस उड्डे तक पहूँच चुके थे। बस चलने ही बाली थी कि दोनों उस पर चढ़ गये। बस भरी हुई थी प्रोफसर को देख दो छात्र अपनी जगह उनहें बिठाने लगे। मगर शिवशंकर विनोद लाल को साथ लेकर आखिरी सीट पर जा बैठे। बस चलने लगी।

'बोलो विनोद। क्या बात है? मुझसे नहीं कहोगे?- शिवशंकर बडी आत्मीयता से बोले।

'मेरी घडी खो गयी। एक नई खरीदनी है।' विनोद ने धीरे से कहा।

'बस, इतनी सी बात'- शिवशंकर हँसने लगे और फिर बोले। 'हाँ! तो किस दूकान से खरीदना चाहते हो?'

'मेरे एक दोस्त की दूकान है 'स्टाइल' का नाम आपने सुना नहीं?' - विनोद ने पूछा।

'ओहो। वह दूकान। लेकिन वहाँ तो...' शिवशंकर की बात काटकर विनोद ने कहा - 'देखिए सहब, मेरे पास दो सौ रूपये ही पडे हैं। यह अब दूँगा। बाकी तनख्वाह मिलने पर। विनोद लाल दिल से सोचने लगे कि इनसे कुछ पैसा उधार माँगूँ पर अगले ही पल उन्होंने वह ख्याल निकाल दिया। कई दोस्तों से पाँच सौ की माँग की। पर नहीं मिला। वैसे पच्चीस तारीख के बाद किसके पास पैसे होंगे। घडी देखकर काम करने की आदत पडने से आजतक कुछ ज़्यादा ही मुसीबत होने लगी है। दो दिन बीवी की घडी देख (जेब में डालकर) समय का पता लगाता आ रहा है। विद्यार्थी प्रोफसर को गंवार न समझ बैठे। शिवशंकर विनोद को देखते रहे। और अचानक बोले उठो विनोद उठो कहाँ खो गये थे तुम। हम शहर आ गये। तभी विनोद का ख्यालों से छुटकारा मिला।

दोनों वस से उतरकर सडक के किनारे चलने लगे। चलते चलते वे घडी की दूकान के सामने पहूँचा गये। शिवशंकर को बाहर खडा करके विनोद दूकान के भीतर गये। वे पहले अपने दूकानदार दोस्त से मिलकर बातें करने लगे। दोस्त के बदलते रंग बाहर खडे शिवशंकर को साफ दिखाई दे रहे थे। उन्हें कुछ गडबड मालूम पडा। कुछ ही देर में विनोद बाहर आये। मायूसी उनके चेहरे पर छायी थी। शिवशंकर ने प्यार से विनोद के कंधे पर हाथ रखकर पूछा- 'क्या है विनोद?'

-'क्या बताऊँ? पहले तो बोला था उधार में घडी देगा। मगर अब कहता है पिताजीने उधार देना मना किया है'- विनोद ने बताया।

'तुम फिकर न करो। कोई तो रास्ता निकल आयेगा चलो हम घर चलते है'- शिवशंकर ने कहा।

-'यह दूकानदार लोग भी बडे अजीब किस्म के होते हैं। महीनों दूकान में चीज़ें सडती रहे उन्हें फिकर नहीं रहती। कोई उधार माँगे तो नहीं देते। अगर दे भी दिया तो उसके बैसे वसूल होते तक तंग करते रहेंगे'- विनोद अपनी निराशा और गुस्सा शब्दों में उँड़लो लगे।

लो मेरा घर-शिव शंकर का घर।

-'बहुत अच्छा है। पर यह तो खुला हुआ हैं'- विनोद ने चकित स्वर में कहा।

-'धर में एक और है'- शिवशंकर बोले लेकिन आप ने तो शादी विनोद् के पूछने पहले एक मार्मिक सवाल आया- तो क्या हुआ शादी करके तुम खुशी पा गय? शादी न करने से आप खुश है?'- विनोद ने सवाल का सवाल से ही जवाब दिया।

'यह तो अपनी अपनी पसन्द, नज़रिया आलग अलग है पर छोडिए इन इन बातों को फाटक खोलने की आवाज़ सुनकर घर से एक युवक जिसकी उम्र करीब बीस्-बाईस होगी, दौडकर आया और शिवशंकर के गले से लिपट गया।

'यह विष्णु है, मेरा बेटा' शिवशंकर ने युवक के सिर पर चूमते हुए कहा।

'आपका बेटा?'- विनोद चौंक उठे। 'बाबा आप चाय पियेंगे?'- युवक ने पूछा। 'देखो यह हमारे कालेज के प्रोफसर है, विनोद लाल।' शिवशंकर कहते जा रहे थे कि विष्णु विनोद लाल के पाँव छूने लगे। विनोद ने उसे उठ खडा करको सीने से लगाया।

-'बैठो विनोद'- शिवशंकर की आवाज़।

'बाबा, मैं चाय लाऊँ'- विष्णु ने दोहराया। 'ओ के बेटा' शिवशंकर का आदेश पाते ही विष्णु भीतर की ओर लपका।

'क्या सोच रहा है?' विष्णु के बारे में होगा न?'

शिवशंकर के पूछने पर विनोद ने सिर हिलाया।

-'देखो विनोद। मैं भी अनाथ, वह भी अनाथ। हम दो अनाथ मिलकर अब दोनों सनाथ हुए। कैसा लगा?'- शिवशंकर ज़ोरसे हँस पडे। 'मैं अभी आया'- कहकर वे अंदर चले।

अच्छा मकान। साफ-सुथरा कमरा। इसे कहते हैं घर। विनोद देखता रह गया। अब शिवशंकर विष्णु दोनों कमरें में लौट आये। चाय और कुछ खाने की चीज़े परोसीं गयीं।

-'वाह। साहब। आप सचमुच ही बडे दिलवाले हैं।'- विनोद ने कहा।

-'विष्णु करते क्या है?'- विनोद ने पूछा। -'फिलहाल शराब की दूकान में सेल्समेन है। पर इसे कोई बुरी आदत नहीं है।'- शिवशंकर ने विष्णु के गाल पर हाथ फेरते हुए बताया।

चाय पीते समय विनोद को सुबह की घटना याद आयी। शक्कर के अभाव के कारण आज चाय नहीं मिली। बीबी की शिकायत पेट-भर मिली। शाम को लौटते वक्त शक्कर और दाल खरीदनी है।

विनोद यों सोच रहे थे कि विष्णु ने उनके पास आकर एक बिल्कुल नयी और खूबसूरत घडी बढाते हुए कहा -'यह लीजिए साहब।'

'यह क्या? नहीं नहीं मुझे नहीं चाहीए।' विनोद चकित होकर बोले।

'ऐसा मत कहिए साहब, लीजिए न'- घडी विनोद के हाथ में रखकर विष्णु ने शिवशंकर की और देखा।

शिवशंकर ने कहा- 'ले लो विनोद।'

-'मगर यह घडी तो..'- विनोद पूर न कह सके कि शिवशंकर ने बताया। -'विष्णु की है। मैं ने उसको सबकुछ बता दिया।'

-'यह मेरी ओर से एक तोहफा समझकर स्वीकार कीजिए।'- विष्णु विनम्रता से बोला।

'बेटे'- विनोद गद्गद् हो उठे। उन्होंने विष्णु के माथे पर चूमते हुए कहा -'भगवान तुझे लम्बी उम्र तक सही सलामत रखें। काश। हमारे आजकल के नौजवान तुम्हारे जैसे होते।

विनोद लाल को लगा कि ज़्यादा वहाँ ठहर जाय तो आँसू उमड पडेंगे। इसीलिए शिवशंकर और विष्णु से विदा लेकर बस अड्डे की और तेज़ी से चले। समय शाम के सात बज चुका था। वे कालेज के पास उतरे। सीधे दूकान पर गये। चावल, दाल, शक्कर, नमक, मिर्च आदि ज़रूरी चीज़ें खरीद लीं। जेब में टटोलकर देखा तो रूपयें गायब। तब उनहें याद आयी बस की सारी भीड। किसी ने उनके पैसे चुरा लिये है। अब क्या किया जाय। दूकानदार को तो पैसा देना है। वह अब पुराना हिसाब भी माँग रहा है। कुल मिलकर ढाई सौ रूपये। दूकानदार को क्या बतायें और कैसे बतायें कि पैसे की चोरी होगयी है और बाद में देंगे। विनोद लाल दुविधा में पड गये। -'मैं अभी आया'- कहकर विनोद लाल ईधर उधर घूमते रहे। उनकी नज़र विष्णु की दी हूई घडी पर पडी। कई बार उनहोंने घडी को छूकर देखा।

-'अरे विनोद। यहाँ क्या कर रहा है तू?'- मुडकर देखा तो पाया मेहन बाबू को। बडा चालाक बिज़िनेज़ मेन। -'अरे तुम्हारे हाथ की यह नयी शानदार घडी। मुझे दे दो। तीन सौ रुपये देता हूँ। मोहन बाबू की बात सुनकर विनोद चौंक उठे। पुराना दोस्त है। बी.ए. तक साथ पढा है कालेज में। कोई भी नई चीज़ देखी तो उसे पैसा देकर लेने की एक आदत जुनून के रूप में सदा उसपर सवार है।

क्या सोच रहा है तू। यह घडी मुझे देगा न। यह लो। तीन सौ'- विनोद के जवाब का इंनतज़ार न कर उसने रूपये बढा दिये।

विनोद के सामने चार चेहरे बार बार आ फिरते रहे - बीवी, शिवशंकर, विष्णु और दूकानदार- चार चेहरे'।

क्या करे क्या न करे - घर जाना हो तो....

विनोद ने फिर आगे पीछे कुछ नहीं सोचा। घडी उतारकर मोहन बाबू को दे दी और तीन सौ रुपये हाथ में ले लिये। फिर सीधे दूकान जाकर सारा हिसाब चुकाकर खरीदी गयी चीज़ों उठाकर घर की तरफ तेज़ी से चलने लगे। ❖

इन्सानियत

राखी पी.
(एम.एस.सी., केमिस्ट्री, प्रधम वर्ष)

इन्सानियत के तराज़ू में, आज पलड़ भारी है किसका?
न तेरा है, न मेरा है, बस उन लोगों का हैं;
तोप लिए हाथों में, जो कर रहे है इन्सानियत पर वार
ऊँची आवाज़ों दब चाती हैं, ऊँचे शीशा झुक जाते हैं।
मन में इच्छा होती है अक्सर, उड़ जाऊँ बनकर शांति विहग
लेकर प्यार का संदेश, छा जाऊँ इस रक्ताभिषेक धारा पर।
जी करता है, प्रेम बनकर बरस जाँऊ
नफ़रत की इस झुलसती हूई आग में।
कह डालू मन की बात, बस उन लोगों केलिए,
जो थको-माँदे बैठे हैं, करते हुए उनका इन्तज़ार;
कि लौट आऐंगे, कभी वह फिर जीने की इच्छा से।
और उन लोगों केलिए, न मिटती हैं जिनके खून की प्यास।
मन में अगर बची हैं थोडी सी इन्सानियत
बाँट दो उन लोगों में, तरस रहे हैं जिसके लिए वह।
आखिर बह इन्सानियत ही तो है, जिसकी डोर में
बन्धा हुआ हैं हर इन्सान।
इन्सानियत के तराज़ू में, आज पलड़ भारी है किसका?
न तेरा है, न मेरा है, बस उन लोगों का हैं;

श्री राम कृष्ण के कुछ सूक्त

संपादक : विवेक कम्मत्
(बि.एस.सी.मात्स, दूसरा वर्ष)

श्री राम कृष्णा परम हँस का जन्म बंगाल के एक गाँव में हुआ था। बाल्य काम से ही उनमें ईश्वर दर्शन का इच्छा प्रकट हुई। सतरहवें साल में वे कलकत्ता गये और फिर दक्षिणेश्वर मंदिर के पूजारी बने। उनके कयी गुरू नहीं थे। फिर भी वे हिन्दू ईसाई और ईसलाँ धर्मों के पण्टित बने। उनके शिष्यों में से प्रमुख है श्री विवेकानन्द स्वामी। रामकृष्ण के कुछ चुने हुए वचन यहाँ प्रस्तूत किया गया है। लेखक के अज्ञान से अगर कोई गलती हूई है, उनका आप कृपया माँफ करें।

१. राम को गगन पर आप कई तारें देखते है। पर जब सूरज का उदय होता है तो वे सब ग़ायब हो जाते है। इसलिए क्या आप यह कह सकते है कि दिन में गगन पर तारें नहीं है? इसी तरह हे मानव, तुम्हारे अज्ञान के मारे तुम्हें ईश्वर का दर्शन न मिलने पर तुम यह न कहो कि ईश्वर नहीं है।

२. ईश्वर निराकार है। साकार भी है। बह इल दोनों के अतीत भी है। ईश्वर क्या है, इस का जानकारी सिर्फ उसी को है। वे अपने भक्तों के सामने के रान ने अलग अलग रूप और भाव से प्रत्यक्ष होते हैं।

३. जैसे एह ही सुवर्ण से अलग आभरण बनते हैं, वैसे एक ही ईश्वर देश-काल के अनुसार विविध नाम और रूप में पूजित होता है।

४. एक दिन नमक से बनी हुई एक गुडिया समुद् का गहरायी नापने के लिए पानी में उतरा। वह पानी में समा गया। ऐसे ही हम जब ईश्वर को जानने का श्रम करते हैं, तो हमारा अंघकार का नाश होता है और हम ईश्वर में मिलकर एक हो जाता हैं।

५. कई लोग बच्चों के विरह में रोते हैं।
कई लोग धन के विरह में रोते हैं।
लेकिन जंग में ऐसे कितने हैं जो ईश्वर का विरह के कारण रोते हैं?

६. "स्वामी, सिर्फ आप ही इस जगत का नियंत्रण करते हैं। मैं आप के हाथों से चलने वाली गुडिया है। मेरा परिवार, धन और मैं - सब आप के हैं। ऐसे बोलने वाला ही सच्चा भक्त है।

७. एक उत्तर भक्त ईश्वर को जगन्नाथ के रूप में नहीं, बलकि उपने सबसे प्रिय बन्धु के रूप में देखता है।

८. शिष्ट को कभी भी गुरू का निरूपण करना नहीं चाहिए। गुरू के आज्ञा का पालन निस्तर्क भाव से करना चाहिए। गुरू ईश्वर और मानव को आपस में जोडने वाले महात्मा हैं।

९. ईश्वर को श्रद्धा दीजिए, उनपर विश्वास कीजिए, उनके आश्रय माँग लीजिए। फिर आप को कुछ भी स्वयं करने का अवश्यकता नहीं है। ईश्वर आपको सब कुछ देदेगा।

१०. ईश्वर हमारे अपने हैं। उनसे आप स्वतंत्र भाव से बरताव कीजिए।

११. यह जग ईश्वर का है, आप के नहीं। यह आप अच्छी तरह से समझें। आप केवल ईश्वर के अज्ञा मानने के लिए आये भुत्य हैं।